संपादकीय जागरण

मंगलवार, 6 नवंबर, 2018 : कार्तिक कृष्ण 14 वि. 2075

आत्मविश्लेषण ही व्यक्तित्व विकास की पहली सीढ़ी है

पाठ्यक्रम में नैतिक शिक्षा

एमबीबीएस के पाठ्यक्रम में परिवर्तन समय की मांग थी, क्योंकि बीते करीब दो दशक से उसमें कोई व्यापक बदलाव नहीं हुआ और यह किसी से छिपा नहीं कि इस दौरान चिकित्सा क्षेत्र में तकनीक की गहरी पैठ हो चुकी है। इसी के साथ सरकारी स्वास्थ्य ढांचे से इतर निजी क्षेत्र ने अपना एक अहम स्थान बना लिया है। यह स्वागतयोग्य है कि अगले सत्र से एमबीबीएस छात्र जिस परिवर्तित पाठ्यक्रम से परिचित होंगे उसमें उन्हें मरीजों के साथ सही तरह से पेश आने की शिक्षा भी दी जाएगी। इसे इसलिए आवश्यक समझा गया, क्योंकि बीते कुछ समय से मरीजों और उनके परिजनों की डॉक्टरों एवं अस्पतालों से शिकायतें बढ़ी हैं। कई बार तो तीमारदारों और डॉक्टरों में मारपीट की नौबत तक आ जाती है। इसी तरह मेडिकल कॉलेजों के परिसर अथवा उनके इर्द-गिर्द वैसे झगड़े भी खूब बढ़े हैं जिनमें एक पक्ष जूनियर डॉक्टर होते हैं। यदि इस नतीजे पर पहुंचा गया कि इसके मूल में कहीं न कहीं सदाचरण का अभाव है तो इसे निराधार नहीं कहा जा सकता। मेडिकल पेशा एक विशिष्ट पेशा है। इसकी विशिष्टता और गरिमा बनाए रखी जानी चाहिए। एक कुशल चिकित्सक वह है जो न केवल रोग की सही तरह पहचान कर प्रभावी उपचार करे, बल्कि रोगी को जल्द ठीक होने का भरोसा भी दिलाए। कई बार यह भरोसा उपचार में रामबाण की तरह काम करता है। ऐसे में एमबीबीएस छात्रों के पाठ्यक्रम में डॉक्टरों और मरीजों के रिश्ते को भी शामिल किया जाना उचित ही है। बदले हुए पाठ्यक्रम में एमबीबीएस छात्रों को उपचार के दौरान रोगियों से प्रभावी संवाद के तौर-तरीकों से परिचित कराने के साथ ही उन्हें नैतिक शिक्षा से भी लैस किया जाएगा।

सच तो यह है कि नैतिक शिक्षा हर शैक्षणिक स्तर के पाठ्यक्रम का हिस्सा होनी चाहिए। ध्यान रहे कि आज के युग की एक बड़ी समस्या यही है कि भावी पीढ़ी शिक्षित तो हो रही है, लेकिन अपेक्षित संस्कारों से लैस नहीं हो पा रही है। समाज और देश के हित के लिए यह आवश्यक ही नहीं, अनिवार्य है कि स्कूली शिक्षा से लेकर पेशेवर शिक्षा तक, सब जगह नैतिक शिक्षा को विशेष महत्व दिया जाए। शिक्षित होना तभी सार्थक है जब हमारे छात्र बेहतर नागरिक भी बनें। निःसंदेह एमबीबीएस छात्रों को इस तरह तरह प्रशिक्षित करना भी उल्लेखनीय है कि वे बिना पोस्ट ग्रेजुएट हुए विभिन्न रोगों के उपचार में सक्षम हो सकें। एक समय ऐसी ही स्थिति थी, लेकिन धीरे-धीरे एक ऐसा माहौल बना कि केवल एमबीबीएस की डिग्री को कमतर माना जाने लगा। ऐसा लगता है कि पाठ्यक्रम में तब्दीली करके एक तरह की भूल सुधार की जा रही है। जो भी हो, यह अच्छा है कि कुछ देर से सही, एमबीबीएस पाठ्यक्रम में बदलाव के बारे में सोचा गया और उसमें नई तकनीक के साथ ऐसे पाठ भी शामिल किए जा रहे हैं ताकि डॉक्टर फैसले लेने की क्षमता से भी लैस हो सकें। बेहतर यह होगा कि पाठ्यक्रम में तब्दीली करने के बाद इस बारे में भी कुछ सोचा और किया जाए कि आखिर एमबीबीएस छात्रों के लिए पोस्ट ग्रेजुएशन करना इतना कठिन क्यों है?

असंयमित शैली

प्रदेश कांग्रेस अध्यक्ष राज बब्बर द्वारा अक्सर वाणी का संयम खो देना आश्चर्यजनक है। इतने महत्वपूर्ण पद का दायित्व निभा रहे व्यक्ति से सटीक शब्दों और संयमित शैली की अपेक्षा की जाती है। कानून व्यवस्था की स्थिति पर राज्यपाल राम नाईक को प्रेषित पत्र में राज बब्बर द्वारा उठाए गए सवाल और शब्दों को किसी भी तर्क से जायज नहीं ठहराया जा सकता। उनका राज्यपाल से यह पूछना कि वह किसके दबाव में मौन हैं, आपत्तिजनक है। राज्यपाल के सांविधानिक पद को दलगत राजनीति में घसीटना श्रेष्ठ परंपराओं के अनुरूप नहीं है। यह ठीक है कि अपवाद छोड़कर अधिकतर राज्यपालों की पृष्ठभूमि किसी न किसी राजनीतिक दल एवं विचार से जुड़ी होती है। इसके बावजूद यह पद धारण करने वाले व्यक्ति से अपेक्षा की जाती है कि वह दलगत राजनीति से परे सूबे के संविधान प्रमुख के रूप में दायित्व का निर्वहन करेंगे। प्रायः सभी राज्यपाल ऐसा ही करते भी रहे।

राज्यपाल ने इस बारे में राज बब्बर को नसीहत की शैली में चेतावनी दी है जो बेहद जरूरी थी

मौजूदा राज्यपाल राम नाईक भी अपवाद नहीं हैं। उनके कार्यकाल में अब तक किसी गैर-भाजपाई दल के प्रति उनके पूर्वाग्रह का प्रसंग सामने नहीं आया। वह सहज और सर्वसुलभ रहते हैं। इसके बावजूद प्रदेश कांग्रेस अध्यक्ष द्वारा उन्हें लक्षित करके कानून व्यवस्था के सवाल पर बेहद आक्रामक शैली में सवाल दागना आश्चर्यजनक है। राज्यपाल ने इस बारे में राज बब्बर को नसीहत की शैली में चेतावनी दी है जो बेहद जरूरी थी। दरअसल, राज बब्बर किसी विषय पर प्रतिक्रिया व्यक्त करते समय अक्सर शब्द और शैली की शालीनता खो बैठते हैं। हाल ही में उन्होंने नक्सलियों की आपराधिक एवं राष्ट्रविरोधी गतिविधियों की सराहना करते हुए कहा था कि नक्सली क्रांति कर रहे हैं। इस टिप्पणी ने उन लोगों को भी चौंका दिया जो नक्सल गतिविधियों के प्रति संकोचपूर्वक नरम रवैया रखते हैं।

कह के रहेंगे — माधव जोशी

जागरण जनमत — कल का परिणाम

क्या अयोध्या विवाद के निपटारे के लिए अध्यादेश का विकल्प व्यावहारिक होगा?

आज का सवाल
क्या 59 मिनट में कर्ज की मंजूरी से एमएसएमई सेक्टर को मजबूती मिलेगी?

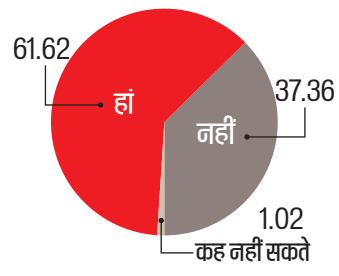

अपनी राय और अधिक लोगों तक पहुंचाने के लिए अपने मोबाइल के मैसेज बॉक्स में जाकर **POLL** लिखें, स्पेस देकर **Y, N** या **C** लिखकर 57272 पर भेजें
Y – हां, **N** – नहीं, **C** – कह नहीं सकते

परिणाम जागरण इंटरनेट संस्करण के पाठकों का मत है।
सभी आंकड़े प्रतिशत में।

जिम्मेदारी से मुंह मोड़ने का नतीजा

डॉ. भरत झुनझुनवाला

आइएलएंडएफएस संकट कंपनी के मालिकों, स्वतंत्र निदेशकों और रेटिंग एजेंसियों के लापरवाह रवैये का परिणाम है। अपनी क्षमता से अधिक कर्ज उठाना भी उसके लिए आफत बन गया

इन्फ्रास्ट्रक्चर लीजिंग एंड फाइनेंशियल सर्विसेज यानी आइएलएंडएफएस एक विशालकाय कंपनी है। इस कंपनी के मुख्य शेयरधारक भारतीय जीवन बीमा निगम, भारतीय स्टेट बैंक और सेंट्रल बैंक ऑफ इंडिया हैं। ये तीनों ही सरकारी उपक्रम हैं। आइएलएंडएफएस द्वारा बाजार से 91 हजार करोड़ रुपये का भारी-भरकम कर्ज लिया गया। इस धन का उपयोग कंपनी ने सड़कें, सुरंग, पुल और बिजली संयंत्र जैसी बुनियादी सुविधाओं के निर्माण में किया, लेकिन कंपनी संकट में फंस गई और इस ऋण की अदायगी नहीं कर पाई। इस ऋण को लेने में भी कंपनी ने चतुराई की। इसे ऐसे समझते हैं कि मान लीजिए आपके पास 25 हजार रुपये की पूंजी है। आपने इस पूंजी को दिखाकर बैंक से 75 हजार रुपये का कर्ज ले लिया। इस तरह आपके पास एक लाख रुपया हो गया। इस एक लाख रुपये को आपने फिक्स डिपॉजिट करा दिया और फिर इस फिक्स डिपॉजिट को दिखाकर दूसरे बैंक से तीन लाख रुपये का कर्ज ले लिया। फिर इस तीन लाख रुपये का फिक्स डिपॉजिट कराया और तीसरे बैंक से 9 लाख रुपये का कर्ज ले लिया। इस प्रकार आपने 25 हजार की पूंजी पर लगभग 12 लाख रुपये का कर्ज ले लिया। बैंकों द्वारा सामान्य रूप से ऋण पूंजी अनुपात 3:1 रखा जाता है यानी 25 हजार रुपये की पूंजी पर बैंक अधिकतम 75 हजार रुपये का कर्ज देते हैं। इस दृष्टि से 12 लाख रुपये के कर्ज पर आइएलएंडएफएस को तीन लाख रुपये की पूंजी उपलब्ध करानी थी, लेकिन अपनी तिकड़म से आइएलएंडएफएस ने मात्र 25 हजार की पूंजी पर 12 लाख रुपये का कर्ज ले लिया। बैंकों द्वारा ऋण पूंजी अनुपात 3:1 इसलिए रखा जाता है कि यदि कंपनी घाटे में आ गई तो पहले उसकी अपनी पूंजी का सफाया होगा और घाटे के बावजूद कर्ज की वसूली की जा सकेगी। इस काल्पनिक मामले में 12 लाख रुपये के कर्ज को 25 हजार रुपये की पूंजी पर लेने से कर्ज की सुरक्षा नहीं रह गई। यही आइएलएंडएफएस के संकट का मूल कारण है।

आइएलएंडएफएस के अधिकारियों का कहना है कि सरकारी उपक्रमों पर उनका हजारों करोड़ रुपया बकाया है। सरकार द्वारा यह भुगतान न किए जाने के कारण आइएलएंडएफएस संकट में आ गई। आइएलएंडएफएस का यह कहना सही है, लेकिन मूल रूप से अपनी क्षमता से अधिक कर्ज लेने के कारण यह कंपनी संकट में फंसी है। वित्तीय जगत में लोग इससे वाकिफ थे कि यह कंपनी अपनी क्षमता से अधिक कर्ज ले रही है। आइएलएंडएफएस के पूर्व निदेशक एवं मारुति सुजूकी के चेयरमैन आरसी भार्गव ने एक साक्षात्कार में इसकी तस्दीक भी की है कि सभी को मालूम था एक दिन आइएलएंडएफएस संकट में फंसेगी। प्रश्न है कि आइएलएंडएफएस की यह तिकड़म समय रहते सरकार और जनता को क्यों नहीं बताई जा सकी? लगता है कि एलआइसी, एसबीआइ और सेंट्रल बैंक ऑफ इंडिया के अधिकारियों ने भी यह छिपाया कि आइएलएंडएफएस ने अपनी क्षमता से अधिक

कर्ज ले रखा है। इसका प्रमाण यह है कि जब आइएलएंडएफएस पर संकट के बादल मंडराने शुरू हुए तो उसके अध्यक्ष रवि पार्थसारथी ने इस्तीफा दे दिया। फिर एलआइसी के प्रबंध निदेशक हेमंत भार्गव इसके अध्यक्ष बने।

उन्होंने भी शीघ्र ही इस्तीफा दे दिया। इसके बाद एलआइसी के पूर्व प्रमुख एसबी माथुर को इसकी कमान सौंपी गई। इस घटनाक्रम से पता चलता है कि एलआइसी पूरे मामले पर नजर बनाए हुई थी, लेकिन उसने भी इस स्थिति को सार्वजनिक नहीं किया। यह भी माना जा सकता है कि वित्त मंत्रालय को भी इसकी भनक लग ही गई होगी। इस संकट के गहराने के पीछे दूसरी भूमिका कंपनी के स्वतंत्र निदेशकों की है। हमारे कानून में व्यवस्था है कि मालिक या प्रवर्तकों के अतिरिक्त कुछ स्वतंत्र निदेशक कंपनी के बोर्ड में शामिल किए जाएंगे। इन निदेशकों की जिम्मेदारी है कि वे कंपनी के कार्यकलापों पर नजर रखें और जनता और शेयरधारकों को वस्तुस्थिति से अवगत कराएं। इस मामले में स्वतंत्र निदेशक भी चुप्पी साधे रहे। तीसरी भूमिका रेटिंग एजेंसियों की थी। इन एजेंसियों ने संकट आने तक आइएलएंडएफएस को ए-1 की रेटिंग दे रखी थी। फिर एक महीने के भीतर ही उसकी रेटिंग घटाकर जंक स्तर पर ले आए। रेटिंग एजेंसियां अपनी भूमिका के साथ न्याय नहीं कर पाईं। एक तरह से यह संकट कंपनी के मालिकों, स्वतंत्र निदेशकों और रेटिंग एजेंसियों के लापरवाह रवैये का परिणाम है।

आइएलएंडएफएस संकट का अर्थव्यवस्था से भी संबंध है। यदि आइएलएंडएफएस ने अपनी क्षमता से अधिक कर्ज ले भी लिया तो उसकी अदायगी क्यों नहीं हो सकी? यदि उससे सड़क बनाई और उस सड़क से कमाई हुई तो फिर भुगतान तो किया ही जा सकता था। लगता है कि आइएलएंडएफएस द्वारा जो बुनियादी ढांचा बनाया गया उससे अपेक्षित आमदनी नहीं हो पाई और इसी कारण कंपनी संकट में पड़ गई। देखना होगा कि बुनियादी ढांचे से आय क्यों नहीं हुई? अर्थव्यवस्था इस समय बड़े शहरों और बड़ी कंपनियों द्वारा ही बढ़ रही है। उन्हें देश के विस्तृत इलाके में बुनियादी ढांचे की खास आवश्यकता नहीं है। जैसे बेंगलुरु के सॉफ्टवेयर पार्क से यदि देश को आय हो रही है तो उसके लिए जम्मू से कश्मीर तक बनाई गई सुरंग का कोई अर्थ नहीं रह जाता। उस सुरंग से आय तभी होगी जब जम्मू-कश्मीर में अर्थव्यवस्था को गति मिलेगी।

चूंकि देश की अर्थव्यवस्था प्रमुख शहरों में सिमट रही है इसीलिए देश के विस्तृत इलाके में बुनियादी ढांचे का जाल बिछाने का जो प्रयास सरकार कर रही है उससे अपेक्षित राजस्व प्राप्त नहीं हो रहा है। जैसे वर्तमान में बिजली कंपनियों की हालत खस्ता है, क्योंकि बिजली की मांग कम है। कारण यह है कि हमारा आर्थिक विकास मूलतः बड़े शहरों की चुनिंदा कंपनियों पर टिका हुआ है जबकि शेष देश की अर्थव्यवस्था उतनी गतिशील नहीं है। अर्थव्यवस्था का केंद्रीयकरण भी आइएलएंडएफएस संकट का एक प्रमुख कारण है। देश के विस्तृत भू भाग में बुनियादी ढांचे की विशेष जरूरत नहीं रह गई है। उसे बनाने में जो निवेश किया जा रहा है उससे अपेक्षित राजस्व नहीं मिल रहा है। अपनी क्षमता से अधिक कर्ज उठाना भी आइएलएंडएफएस के लिए आफत बन गया। ऐसे में सरकार को चाहिए कि अर्थव्यवस्था को शहरों में केंद्रित करने के स्थान पर पूरे देश में उसका विस्तार करने के लिए एक उपयुक्त रणनीति बनाए।

इस मामले में एलआइसी, स्वतंत्र निदेशकों और रेटिंग एजेंसियों द्वारा जो हीलाहवाली की गई, उससे निपटने के लिए कुछ संस्थागत उपाय किए जाएं। आइएलएंडएफएस संकट का असर हम और आप पर भी पड़ेगा। आपने जो रकम म्यूचुअल फंड अथवा जीवन बीमा पॉलिसी में लगा रखी है उस रकम को आइएलएंडएफएस बांड में लगाया गया है। आइएलएंडएफएस के डूबने के साथ आपकी इस रकम पर भी संकट आ सकता है। इस लिहाज से यह मसला आम आदमी से भी जुड़ा हुआ है। भविष्य में ऐसे संकट की पुनरावृत्ति न हो इसके लिए कुछ कारगर कदम उठाने होंगे।

(लेखक वरिष्ठ अर्थशास्त्री एवं आइआइएम बेंगलूर के पूर्व प्रोफेसर हैं)

response@jagran.com

समानता के बहाने विशिष्टता की उपेक्षा

डॉ. देवेंद्र कुमार

आखिर सबरीमाला मंदिर में पूजा-पाठ की हिंदू प्रथाओं को मानकीकृत करने की कोशिश क्यों की जी रही है?

हिंदू संस्कृति और इसकी धार्मिक मान्यताओं पर कथित सेक्युलर खेमे के सुनियोजित बौद्धिक हमलों की फेहरिश्त बहुत लंबी है। किसी न किसी बहाने यह खेमा हिंदू मान्यताओं को चुनौती देने और हिंदू धर्म को नीचा दिखाने की कोशिश करता ही रहता है। केरल स्थित सबरीमाला मंदिर पर आए सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय के बहाने इस खेमे ने महिला अधिकारों की आड़ में एक बार फिर हिंदू मान्यताओं पर आघात करने की कोशिश की है। वे यह रेखांकित करने में जुटे हुए हैं कि हिंदू अपनी महिलाओं को मंदिर में प्रवेश देने के विरोधी हैं। चूंकि राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ श्रद्धालुओं की भावनाओं का समर्थन कर रहा है इसलिए सेक्युलर खेमे के लोग संघ परिवार पर यह आक्षेप लगा रहे हैं कि वह हिंदू धर्म को सेमेटिक धर्म-संस्कृति के ढांचे में डालने का प्रयत्न कर रहा है और उसका इरादा हिंदू धर्म की विविधता को समाप्त कर उसे अन्य पंथों के अनुरूप बनाना है। कथित सेक्युलर यह भी कह रहे हैं कि हिंदुत्व समर्थक एकेश्वरवादी धर्मों की छवि के अनुरूप हिंदू धर्म के सार को नष्ट करने की कोशिश कर रहे हैं। उनका एक अन्य आरोप यह है कि संघ परिवार हिंदू धर्म को 'मानकीकृत' करने में जुटा है। गौर से देखा जाए तो सेक्युलरिस्ट एक तरह से वही कर रहे हैं जिसका आरोप वे संघ परिवार पर लगाते रहे हैं। साफ है कि सबरीमाला मामले पर आए सर्वोच्च न्यायालय के फैसले ने सेक्युलरिज्म और प्रगतिशीलता का विमर्श चलाने वाले संघ विरोधी बुद्धिजीवी समुदाय को एक और अवसर दे दिया है। यहां इस निर्णय की पृष्ठभूमि को समझना जरूरी है।

पिछले करीब 15 सौ वर्षों से सबरीमाला के अयप्पा मंदिर में 10 से 50 साल तक की महिलाओं को गर्भ गृह में प्रवेश की अनुमति इस दृढ़ मान्यता के चलते नहीं है कि भगवान अयप्पा बाल-ब्रह्मचारी हैं। 2006 में अयप्पा मंदिर के एक ज्योतिषी परप्पनगडी उन्नीकृष्णन द्वारा दिया गया एक बयान इस प्रकरण की पृष्ठभूमि की धुरी बना। उन्होंने कहा था कि मंदिर में स्थापित अयप्पा की शक्ति कम हो रही है, क्योंकि मंदिर में किसी युवा महिला ने प्रवेश किया है। इसके बाद कन्नड़ सिनेमा से जुड़ी एक अदाकारा ने इस बात को स्वीकार किया कि वह एक बार इस मंदिर में गलती से प्रवेश कर चुकी हैं। इसी बयान और स्वीकारोक्ति के बाद राज्य की यंग लॉयर्स एसोसिएशन सुप्रीम कोर्ट चली गई। वहां उसने इसके खिलाफ याचिका दायर कर दी, जिसकी सुनवाई करते हुए सुप्रीम कोर्ट ने 15 सौ साल पुरानी मान्यता के खिलाफ अपना निर्णय दिया। इस पूरे प्रकरण में कुछ सवाल उठे हैं। क्या जिन लोगों ने सुप्रीम कोर्ट के निर्णय के चलते सबरीमाला मंदिर में प्रवेश की

कोशिश की, क्या वे वाकई भगवान अयप्पा के भक्त हैं? क्या उनकी आस्था वाकई उस मंदिर में है? अगर हां तो वे उस मंदिर की मान्यताओं को चुनौती क्यों दे रहे हैं? अगर नहीं तो फिर अयप्पा मंदिर में जाने की उनकी रुचि का कारण आखिर क्या है?

यदि किसी समाज की कोई विशेष मान्यता अगर समग्रता में समाज हित में नहीं है तब तो उस पर कानूनी विचार होना चाहिए, लेकिन अगर वह मान्यता अपनी स्वयं की विशेषता के साथ परंपरा रूप में चली आ रही हो तो फिर उसे चुनौती देने का मतलब नहीं बनता और तब तो बिल्कुल भी नहीं जब खुद श्रद्धालु उस परंपरा में बदलाव की मांग न कर रहे हों। हिंदू धर्म की विविधता उसे अद्वितीय बनाती है। विविधता से परिपूर्ण किसी धर्म के भीतर विभिन्न स्वायत्त मान्यताएं भी हो सकती हैं। सनातन धर्म में हिंदुओं के बीच भक्ति का अपना विशेष तरीका है। कुछ मंदिरों में भक्तों को देवी-देवताओं की पूजा करने के लिए परिसर में प्रवेश करने से पहले अपने जूते उतारना अनिवार्य होता है तो कहीं चमड़े के जूते पहनने को भी अपवित्र नहीं माना जाता। इसी तरह कई धार्मिक स्थलों पर पुरुषों और महिलाओं, दोनों के लिए एक विशेष पारंपरिक पोशाक पहनना अनिवार्य है। कई मंदिरों में कड़ाई से शाकाहार का पालन होता है तो कई ऐसे मंदिर भी हैं जहां पशु मांस का चढ़ावा किया जाता है। इसी तरह एक देवता ब्रह्मचारी भी हो सकते हैं, जबकि दूसरे में प्रेम का अवतार भी। सबरीमाला में श्रद्धालुओं का अपने प्रमुख देवता भगवान अयप्पा की पूजा करने का भी एक अनोखा तरीका है। चूंकि यहां अयप्पा एक शाश्वत ब्रह्मचारी हैं इसलिए मंदिर में 10-50 साल के आयु वर्ग की लड़कियों और महिलाओं के जाने पर मनाही है, लेकिन इसमें भी अपवाद है, जैसे अचंकोविल श्री धर्मस्थस्थ मंदिर। यहां अयप्पा भगवान को दो पत्नियों, पूर्णा और पुष्काला के साथ विवाहित व्यक्ति के रूप में और सत्यका नाम के बेटे के साथ चित्रित किया गया है। इस अचंकोविल मंदिर में महिलाओं के प्रवेश पर सबरीमाला सरीखा कोई प्रतिबंध पर लागू नहीं होता। यह मंदिर सबरीमाला से केवल 30 किमी की दूरी पर है। देश भर में सैकड़ों अन्य अयप्पा मंदिर हैं जो महिलाओं को नहीं रोकते हैं। फिर भी आश्चर्यजनक रूप से कुछ स्वयंभू सेक्युलरिस्ट अयप्पा मंदिर में पूजा की हिंदू प्रथाओं को मानकीकृत करने की कोशिश कर रहे हैं और इसी कारण वे श्रद्धालुओं के विभिन्न समूहों के साथ संघ परिवार पर भी बेबुनियाद आरोप लगा रहे हैं।

सबरीमाला मामले में फैसला देने वाली पांच सदस्यीय न्यायिक पीठ की महिला न्यायधीश न्यायमूर्ति इंदु मल्होत्रा की टिप्पणी गौरतलब है। उन्होंने बहुमत से अलग फैसले में कहा था कि अगर किसी को किसी धार्मिक प्रथा में भरोसा है तो उसका सम्मान होना चाहिए, क्योंकि ये प्रथाएं संविधान से संरक्षित हैं। समानता के अधिकार को धार्मिक स्वतंत्रता के अधिकार के साथ ही देखना चाहिए। उन्होंने यह भी कहा था कि यह मुद्दा सिर्फ सबरीमाला तक सीमित नहीं है, बल्कि इसका असर अन्य पूजा के स्थान अथवा धार्मिक स्थलों तक जाएगा। सबरीमाला निर्णय के बाद उनका अंदेशा सच साबित होता दिख रहा है। स्थिति ऐसी बनी है कि अचानक विभिन्न धर्मों से संबंधित कार्यकर्ता (श्रद्धालु नहीं) सबरीमाला मंदिर में प्रवेश करने के लिए जिद करने लगे हैं। यह जिद महिलाओं की समानरूप से भागीदारी के नाम पर स्थानीय संस्कृति, दशकों से चली आ रही भिन्न परंपरा और सनातन धर्म में हिंदू देवताओं से जुड़ी पूजा पद्धति के प्रति नकारात्मकता को ही दर्शाती है।

(लेखक राजनीतिक विश्लेषक एवं स्तंभकार हैं)

response@jagran.com

ऊर्जा

अच्छाई

जिंदगी जीते हुए हमें अक्सर लगता है कि हम जो कुछ भी सोचते या करते हैं, वह सब ठीक है और जितनी भी गलतियां हैं, वे अन्य लोगों में हैं। इंसान यही सोचता है कि उसकी अपनी सोच, अपनी आदतें, अपने विचार और कार्य सब ठीक हैं। वह सोचता है कि अगर कोई चीज ठीक नहीं हो रही है तो औरों को समझना चाहिए कि वे ही गलती कर रहे हैं। इसी तरीके से हम औरों के अंदर गलतियां देखते रहते हैं और लोगों से यही कहते रहते हैं कि तुमने यह ठीक नहीं किया, तुमने वह ठीक नहीं किया। जब हम संतों-महापुरुषों का जीवन देखते हैं तो पाते हैं कि वे सबके अंदर अच्छाइयां देखते हैं। चाहे कोई इंसान अच्छा न हो, ठीक न हो, परंतु वे उसे गले लगाते हैं, उसकी अच्छाई की ओर देखते हैं। वे उसका बाहरी रूप देखने के बजाय उसके आत्मिक रूप की ओर ही ध्यान देते हैं तथा बार-बार हमें भी यही समझाते हैं कि हम औरों की गलतियों की ओर न देखें और अपने आप को बेहतर करने की कोशिश करें।

दुनिया में जीते हुए हम तरह-तरह के लोगों से मिलते हैं। हरेक के कर्म अलग-अलग हैं, हरेक की सोच अलग-अलग है, हरेक के विचार अलग-अलग हैं, हरेक के खयालात अलग-अलग हैं। अगर हम सोचें कि सारे लोग हमारी मर्जी के मुताबिक चलेंगे तो यह नामुमकिन है। हमें अपनी जिंदगी ऐसे जीनी है जिसमें हम सबके अंदर भलाई देखें, सबके अंदर की अच्छाई को देखें। वह तब होगा जब हम स्वयं को अपने सच्चे रूप में जानेंगे। सब कुछ इंसान के अंदर है, पर हम बाहर खोज रहे हैं।

हमें जो यह मानव शरीर मिला है, इसमें आत्मा और परमात्मा दोनों बसते हैं। हमें केवल अपनी रूह के अंदर की दुनिया को उड़ान देनी है। प्रभु हमारे बहुत करीब हैं। उनसे करीब तो और कुछ हो ही नहीं सकता। हमें उन्हें सच्चे दिल से पुकारना है। हमें केवल अपना ध्यान बाहर से हटाकर अंतस की ओर करना है। जिसने भी ध्यान किया, उसने प्रभु को पा लिया। उसके लिए हमें अपने आप को अच्छे विचारों से परिपूर्ण करना है। महापुरुष समझाते हैं कि अपनी जिंदगी को सद्गुणों से भरो, एक पवित्र जिंदगी को जियो, एक पाक जिंदगी जियो, किसी के मददगार बनो। जब हम ये सद्गुण अपने अंदर समाहित करते हैं तो हम प्रभु को पाने के रास्ते पर कदम उठाने के लायक बन जाते हैं।

संत राजिंदर सिंह जी महाराज

पाठकनामा

pathaknama@nda .jagran.com

जनहित याचिका का दुरुपयोग

आस्था से आहत होती व्यवस्था शीर्षक से लिखे अपने लेख में एनके सिंह ने सबरीमाला मंदिर प्रकरण के दूसरे पक्ष पर सुप्रीम कोर्ट की तरह ही कलम चलाने से परहेज किया है। सुप्रीम कोर्ट ने जनहित याचिका पर सुनवाई करते समय मंदिर और इसकी आस्था से जुड़े दूसरे पक्ष को सुनने की जरूरत नहीं महसूस की। क्या यह दावा किया जा सकता है कि याचिकाएं जनहित के लिए ही दायर की जाती हैं, राजनीतिक और वैचारिक हित साधने के लिए नहीं। यह देखना भी सम्माननीय कोर्ट का दायित्व बनता है। मंदिर पर याचिका दायर करने वाले समूह ने किसके हित को लक्ष्य किया? महिलाओं की समानता के अधिकार को, नहीं, क्योंकि मांग के अभाव में अधिकारों की अवधारणा को साकार नहीं किया जा सकता है। सबरीमाला मंदिर में पूजा-अर्चना के लिए महिलाओं के किसी वर्ग से ऐसी कोई मांग आई ही नहीं थी।

डॉ. हरिप्रसाद राय, आजमगढ़

न्यायालय में हिंदी

सर्वोच्च न्यायालय ने कहा है कि वो अपने फैसलों को हिंदी में अनुवाद करने पर विचार कर रहा है। मुख्य न्यायाधीश रंजन गोगोई ने कहा है कि यह विचार उन लोगों के मद्देनजर रखते हुए आया है जो साक्षर हैं पर शिक्षित नहीं। यह विचार यदि असलियत में लागू हो जाता है तो उन लोगों को बहुत राहत मिलेगी जिन्हें कोर्ट के फैसलों को समझने के लिए भी वकीलों को पैसे देने पड़ते हैं। साथ-ही-साथ यह विचार हिंदी भाषा के विकास में भी सहायता करेगा। यदि सर्वोच्च न्यायालय के फैसले भी हिंदी में अनुदित होने लगें तो सामान्य लोग भी इन फैसलों को समझ पाएंगे और न्यायालय में हो रही कार्यवाही में भी बढ़चढ़कर हिस्सा लेंगे। इससे एक फायदा एक यह भी होगा कि हिंदी भाषा का उपयोग भारत की न्याय प्रणाली में भी बढ़ जाएगा। यदि इस विचार को मंजूरी मिल जाती है तो हिन्दी पट्टी के लोगों के लिए यह एक सुखद समाचार होगा।

मुग्धा भारती, दिल्ली विवि

प्रकृति की रक्षा जरूरी

वायु प्रदूषण अब इतना बढ़ गया है कि हमें अपनी पीढ़ी को बचाने के लिए प्राकृतिक संसाधनों की रक्षा करनी होगी। प्रत्येक नागरिक को यह बात गांठ बांध कर रख लेनी होगी कि मनुष्य प्रकृति के इशारों पर चलता है न कि प्रकृति मनुष्य के इशारों पर। भले ही आज मानव चांद पर पहुंच गया हो लेकिन पर्यावरण को नियंत्रित करने में वह अब भी असफल साबित हो रहा है। अब पर्यावरण की रक्षा के लिए मनुष्य को आगे आना होगा। वातावरण को प्रदूषित करने में मानव का दोष है, जिसने अपने स्वार्थ के लिए प्रकृति से खिलवाड़ किया है। आज उसी का दंड समस्त जीव-जंतुओं और पेड़-पौधों को झेलना पड़ रहा है।

शशांक वाष्णेय, पत्रकारिता, डीयू

पर्यावरण रखें स्वच्छ

दीपावली रोशनी का त्योहार है। इसे संपूर्ण देशवासी हर्ष व श्रद्धा के साथ मनाते हैं। परंतु यह ध्यान में रखना अत्यंत आवश्यक है कि इस अवसर पर पटाखों का प्रयोग न किया जाए। क्योंकि पटाखों से ध्वनि प्रदूषण बहुत ज्यादा होता है, जिसके परिणामस्वरूप व्यक्ति बहरा हो सकता है। पटाखों से निकलने वाली जहरीली गैसें श्वास संबंधित समस्याएं तथा फेफड़ों के कैंसर का कारण बन सकती हैं। इसलिए देश के प्रत्येक नागरिक को पटाखों से दूर रहने और पर्यावरण को स्वच्छ रखने का सार्थक प्रयास करना चाहिए।

सौरभ पाठक, ग्रेटर नोएडा

सहमति से बने श्रीराम मंदिर

सर्वोच्च न्यायालय का अयोध्या मामले को अभी कुछ महीनों के लिए ठंडे बस्ते में डाल देने का फैसला ठीक है। इस पर किसी भी प्रकार की जल्दबाजी पूरे देश में धार्मिक सहिष्णुता को चोट पहुंचा सकती है। दरअसल सुप्रीम कोर्ट का मानना है कि इस मामले से ज्यादा बड़े मामले अभी कोर्ट में विचाराधीन हैं जिसका सीधा असर लोगों के जीवन से जुड़ा हुआ है। दरअसल आजादी के 71 साल बीत जाने के बाद भी अगर हमारे देश के लोकतंत्र पर आज भी लोगों का विश्वास बना हुआ है तो उसके पीछे सबसे बड़ी वजह देश का संविधान है। लोगों को इस मामले का फैसला कोर्ट को करने देना चाहिए। कोर्ट पर हर वर्ग के लोगों का भरोसा है। अयोध्या में मंदिर निर्माण के लिए कुछ संगठन केंद्र सरकार पर संसद में अध्यादेश लाने के लिए दबाव बना रहे हैं। लेकिन कोई भी दल इसके समर्थन में आते नहीं दिख रहे हैं। दबाव बनाने वालों को देखना चाहिए कि इतिहास को हम बदल नहीं सकते, मगर उससे सीख तो ले ही सकते हैं। लोगों को 6 दिसंबर 1992 की घटना जरूर याद होगी, ऐसा माहौल दोबारा नहीं बनना चाहिए। कोर्ट के बाहर अगर दोनों पक्षों की रजामंदी से मंदिर निर्माण का मार्ग प्रशस्त होता है तो यह सबसे उत्तम होगा। अन्यथा कोर्ट के फैसले का इंतजार करना ही ठीक है। पीयूष कुमार, नई दिल्ली

साफ-सुथरे नहीं

पूर्व विदेश राज्य मंत्री एमजे अकबर का अमेरिकी पत्रकार पल्लवी गोगोई से सहमति से संबंध बनाने की बात कहना यह साबित करता है कि वे दूध के धुले नहीं हैं। उनके दावे से यह साबित होता है कि चरित्र के मामले में वह साफ-सुथरे नहीं हैं। अखबार का संपादक व पत्रकार स्वयं नैतिकता की मिसाल पेश करता है। उन्होंने सहमति की बात कहकर चेहरे पर जो शराफत का नकाब ओढ़ा था, उसको खुद ही उठा दिया है।

hemahariupadhyay@gmail.com

ट्वीट-ट्वीट

दिल्ली गैस चैंबर बन गई है। हवा में जहर घुला हुआ है। आंखें जल रही हैं, गले में खराश, सीने में जकड़न से निजात नहीं मिल रही। हम सब पल-पल मर रहे हैं! ये हम कहां आ गए? और कहां जा रहे हैं? आनंद प्रधान@apradhan1968

'माल किसी का, कमाल किसी का' भाजपा और आम आदमी पार्टी वाले इसी मुहावरे को चरितार्थ कर रहे हैं। दिल्ली के सिग्नेचर ब्रिज के सभी कार्